LL.B. 1st Sem. Paper -5 Public International Law

Question 1. अंतर्राष्ट्रीय विधि को परिभाषित करें? अंतर्राष्ट्रीय विधि के विभिन्न और आधार स्त्रोतों में इसके क्या है?

Answer: अन्तराष्ट्रीय विधि का सर्वप्रथम प्रयोग प्रसिद्ध आंग्ल विधिशास्त्री जेरेमी बेन्थम (Jeremy Bentham 1748-1832) द्वारा 1789 में किया गया। यह पदावाली 'राष्ट्रों का कानून' का पर्यायवाची है इसके समानार्थक शब्द फ्रांसीसी तथा जर्मन भाषा में क्रमशः ड्रायट डेस जेन्स (droit des gens) और वारकेट (volkerrecht) है। बेंथम ने ड्रायट डेट जेन्स के स्थान पर ड्रायट यनटेरे डेस जेन्स (Droit entere ges gens) को उचित मानते हुये यह तर्क दिया कि यह पदावली पिछली पदावली अर्थात राष्ट्रों का कानून से अधिक स्पष्ट और बोधगम्य हैं। पद अन्तराष्ट्रीय विधि को अमेरिकन लेखक हेनरी ह्वेस्टन (Hennery Wheston) और अन्य कई आंग्ल– अमरीकी लेखकों द्वारा अंगीकार किया गया ।

अन्तर्राष्ट्रीय विधि की परिभाषायें

हाल के अनुसार ' अन्तर्राष्ट्रीय विधि आचरण के उन कतिपय नियमों से बना हुआ है जिन्हें आधुनिक सभ्य राज्य अपने पारस्परिक सम्बन्धों में बाध्यकारी मानतें है।'

ब्रायरले के अनुसार ' राष्ट्रों की विधि या अन्तर्राष्ट्रीय विधि उन नियमों तथा कार्यकारी नियमों के समूह के रूप में परिभाषित की जा सकती है जो सभ्य राज्यों पर उनके पारस्परिक सम्बन्धों में बाध्यकारी है।'

कैल्सन के अनुसार ' अन्तर्राष्ट्रीय विधि या राष्ट्रों की विधि उन नियमों का नाम है जो सामान्य परिभाषा के अनुसार राज्यों के आचारण का जो उनके पारस्परिक सम्बन्धों में होते है, नियमित करती है।

नई परिभाषा – नई परिभाषा के अनुसार 'अन्तर्राष्ट्रीय विधि नियमों का वह समूह है जो राज्यों पर उनके पारस्परिक सम्बन्धों में विधितः बाध्यकर है। नियम प्रधानताः वे नियम है जो राज्यों के सम्बन्ध को नियन्त्रित करते हैं किन्तु केवल राज्य की अन्तर्राष्ट्रीय विधि के विषय नहीं है। अन्तर्राष्ट्रीय संगठन और कुछ सीमा तक व्यक्ति भी अन्तर्राष्ट्रीय विधि द्वारा प्रदत्त अधिकारों और अधिरोपित कर्त्तव्यों के विषय हो सकतें है।

अन्तर्राष्ट्रीय विधि की प्रकृति और आधार

(Nature & basis of international law)

अन्तर्राष्ट्रीय विधि वास्तव में विधि है– अन्तर्राष्ट्रीय विधि प्रकृति और आधार को लेकर काफी विवाद रहा है। क्या अन्तर्राष्ट्रीय वास्तव में विधि है, एक विचार जो यह कहता है कि अन्तर्राष्ट्रीय विधि, विधि नहीं है, आचरण के नियमों की एक नैतिक संहिता है, आचारण के नियमों की एक नैतिक संहिता है, को व्यापक स्वीकृति प्राप्त हुई है। इस मत के प्रवर्तकों में या इस सिद्धान्त के अग्रणी प्रवर्तकों में आस्टिन का नाम लिया जाता है। अन्य लोग जिन्होनें अन्तर्राष्ट्रीय के वास्तविक विधिक चरित्र पर प्रश्न चिन्ह उठाया है इसमें प्रमुख है– हाब्स,प्यूफेनडार्फ, बेन्थम।

जो विधिशास्त्री अन्तर्राष्ट्रीय विधि को विधि नहीं मानते इनके मुख्य तर्क निम्न प्रकार हैं–

1. राज्य विधि में एक केन्द्रीय प्राधिकारी अर्थात् सम्प्रभु शक्ति होती है जो राजनैतिक रूप में श्रेण्ठ होती है और नियमों का प्रतिपादन करती हैं, परन्तु अन्तर्राष्ट्रीय विधि में ऐसे केन्द्रीय प्राधिकारी का अभाव है। अर्थात कोई केन्द्रीय विधायनी संस्था नहीं है
2. राज्य विधि में विधि के प्रवर्तन या विधि के पालन लिये कार्यपालिका होती है परन्तु अन्तर्राष्ट्रीय विधि में ऐसा कुछ भी नहीं जो अन्तर्राष्ट्रीय विधिशास्त्री यह मानते है कि इसके पीछे अनुशासित नहीं है जो अन्तर्राष्ट्रीय विधि का पालन सुनिश्चित करा सके।

Question 2. अन्तर्राष्ट्रीय विधि को परिभाषित करें? अन्तर्राष्ट्रीय विधि के विषय क्या हैं? अन्तर्राष्ट्रीय और संबंध सिद्धान्त कानून क्या है?

Answer: अन्तराष्ट्रीय विधि का सर्वप्रथम प्रयोग प्रसिद्ध आंग्ल विधिशास्त्री जेरेमी बेन्थम (Jeremy Bentham 1748-1832) द्वारा 1789 में किया गया। यह पदावाली 'राष्ट्रों का कानून' का पर्यायवाची है इसके समानार्थक शब्द फ्रांसीसी तथा जर्मन भाषा में क्रमशः ड्रायट डेस जेन्स (droit des gens) और वारकेट (volkerrecht) है। बेंथम ने ड्रायट डेट जेन्स के स्थान पर ड्रायट यनटेरे डेस जेन्स (Droit entere ges gens) को उचित मानते हुये यह तर्क दिया कि यह पदावली पिछली पदावली अर्थात राष्ट्रों का कानून से अधिक स्पष्ट और बोधगम्य हैं। पद अन्तराष्ट्रीय विधि को अमेरिकन लेखक हेनरी ह्वेस्टन (Hennery Wheston) और अन्य कई आंग्ल– अमरीकी लेखकों द्वारा अंगीकार किया गया ।

अन्तर्राष्ट्रीय विधि की परिभाषायें

हाल के अनुसार ' अन्तर्राष्ट्रीय विधि आचरण के उन कतिपय नियमों से बना हुआ है जिन्हें आधुनिक सभ्य राज्य अपने पारस्परिक सम्बन्धों में बाध्यकारी मानतें है।'

ब्रायरले के अनुसार ' राष्ट्रों की विधि या अन्तर्राष्ट्रीय विधि उन नियमों तथा कार्यकारी नियमों के समूह के रूप में परिभाषित की जा सकती है जो सभ्य राज्यों पर उनके पारस्परिक सम्बन्धों में बाध्यकारी है।'

कैल्सन के अनुसार ' अन्तर्राष्ट्रीय विधि या राष्ट्रों की विधि उन नियमों का नाम है जो सामान्य परिभाषा के अनुसार राज्यों के आचारण का जो उनके पारस्परिक सम्बन्धों में होते है, नियमित करती है।

नई परिभाषा – नई परिभाषा के अनुसार 'अन्तर्राष्ट्रीय विधि नियमों का वह समूह है जो राज्यों पर उनके पारस्परिक सम्बन्धों में विधितः बाध्यकर है। नियम प्रधानताः वे नियम है जो राज्यों के सम्बन्ध को नियन्त्रित करते हैं किन्तु केवल राज्य की अन्तर्राष्ट्रीय विधि के विषय नहीं है। अन्तर्राष्ट्रीय संगठन और कुछ सीमा तक व्यक्ति भी अन्तर्राष्ट्रीय विधि द्वारा प्रदत्त अधिकारों और अधिरोपित कर्त्तव्यों के विषय हो सकतें है।

अन्तर्राष्ट्रीय विधि के विषय– सामान्यतः अन्तर्राष्ट्रीय विधि का सम्बन्ध राज्यों के अधिकार, उत्तरदायित्वों तथा हितों से है। साधारणतया इसके नियम राज्यों के लिये हैं। सन्धि द्वारा भी सामान्यता राज्य को ही बाध्य किया जाता है। परन्तु इसका अर्थ यह नहीं है कि दूसरी इकाइयॉ या व्यक्ति अन्तर्राष्ट्रीय विधि के क्षेत्र में नहीं आते । वर्तमान समय में अन्तर्राष्ट्रीय विधि का काफी विकास हो चुका है और अब अन्तर्राष्ट्रीय विधि राज्यों के अतिरिक्त व्यक्तियों, अन्तर्राष्ट्रीय संस्थाओं तथा गैर– ईकाइयों पर भी लागू होती हैं।

विधि के विषय से तात्पर्य उस व्यक्ति या इकाई से है जिसे विधि अधिकार प्रदान करती है तथा उसके विधि में कुछ कर्तव्य तथा उत्तरदायित्व होते है, और अन्तर्राष्ट्रीय अधिकार तथा कर्तव्य रखने की क्षमता है तथा उसमें अन्तर्राष्ट्रीय दावे करके अपने अधिकार बनाये रखने की क्षमता है।

अन्तर्राष्ट्रीय विधि के विषयों से सम्बन्धित प्रचलित विचाारधाराऍ अन्तर्राष्ट्रीय विधि

के विषयों में तीन प्रमुख मत प्रचलित हैं–

1. राज्य ही केवल विषय हैं,
2. व्यक्ति ही केवल विषय हैं, तथा

3. मुख्यतः राज्य अन्तर्राष्ट्रीय विधि के विषय हैं, परन्तु वर्तमान समय में राज्य के अतिरिक्त व्यक्ति तथा कुछ गैर–राज्य इकाइयॉ भी अन्तर्राष्ट्रीय विधि के विषय हैं।

Question 3. मान्यता के सिद्धान्त तथा उसके प्रकार की व्याख्या कीजिए?

Answer: 'मान्यता' शब्द की परिभाषा तथा अर्थ– मान्यता अन्तर्राष्ट्रीय विधि का एक महत्वपूर्ण विषय है। मान्यता ही प्रकिया है जिसके द्वारा नये राज्य को अन्तर्राष्ट्रीय समुदाय का सदस्य के रूप में स्वीकार किया जाता है। आधुनिक युग में मान्यता का महत्व और भी अधिक बढ़ गया है।

स्वार्जनबर्जर के अनुसार– मान्यता को अन्तर्राष्ट्रीय विधि को विकसित करती हुई उस प्रकिया द्वारा अधिक अच्छी तरह से समझाा जा सकता है, जिसके द्वारा राज्यों ने एक दूसरे की नकारात्मक सार्वभौमिकता स्वीकार कर ली है।

प्रो0 ओपेनहाइम के अनुसार– ' किसी नये राज्य को अन्तर्राष्ट्रीय समुदाय के सदस्य के रूप में मान्यता प्रदान करने वाले राज्य यह घोषित करते है कि उनके मत नये राज्य ने अन्तर्राष्ट्रीय विधि में निर्दिष्ट राष्ट्रत्व के तत्व प्राप्त कर लिये है।'

मान्यता के प्रकार (Modes of Recognition)-

मुख्यतः मान्यता दो प्रकार की हो सकती है–

1. तथ्येन मान्यता (de facto recognition) तथा
2. विधि मान्यता (de juer recognition)

तथ्येन मान्यता **(De facto recognition)-** प्रो0 स्वार्जनबर्जर के अनुसार, तब कोई राज्य पूर्ण अथवा विधि मान्यता को देने में देर करना चाहता है तो वह प्रथम चरण में तथ्येन मान्यता प्रदान करता है। तथ्येन मान्यता को देने का मुख्य कारण यह होता है कि मान्यता प्रदान किये जाने वाले राज्य के बारे में सन्देह होता है कि वह स्थायी है अथवा नहीं

तथा वह अन्तर्राष्ट्रीय विधि के अन्तर्गत अपने दायित्वों को पूरा करने के लिए इच्छुक तथा योग्य है अथवा नहीं । इसके अतिरिक्त कभी–कभी यह भी कारण हो सकता है कि मान्यता प्रदान किये जाने वाला राज्य अपनी प्रमुख समस्याओं को तय करने से इन्कार कर दें। तथ्येन मान्यता से तात्पर्य यह है कि मान्यता प्रदान किये जाने वाला राज्य वास्तव में मान्यता के आवश्यक गुण रखता है तथा अन्तर्राष्ट्रीय विधि का विषय माने जाने का अधिकारी है। परन्तु विधि मान्यता के प्रभाव तथ्येन मान्यता से कहीं अधिक होते हैं।

विधि मान्यता (De juer recognition)- यद्यपि मान्यता तब प्रदान की जाती है जबकि मान्यता प्रदान करने वाले राज्य के अनुसार मान्यता दिये जाने वाला राज्य या उसकी सरकार में मान्यता के सभी आवश्यक गुण होते है तथा वह राज्य अन्तर्राष्ट्रीय समुदाय का एक सदस्य बनने के योग्य होता है। प्रो0 स्मिथ के अनुसार, ब्रिटेन में विधिमान्यता प्रदान किये जाने के पहले निम्नलिखित आवश्यक तथ्यों का होना आवश्यक है–

1. स्थायित्व
2. राज्य की सरकार को वहॉ की जनता का सामान्य समर्थन होना, और
3. अन्तर्राष्ट्रीय उत्तरदायित्वों को पूरा करने की इच्छा तथा सामर्थ्य। विधि–मान्यता अन्तिम मान्यता होती है तथा एक बार दिये जाने के बाद इसे वापस नहीं लिया जा सकता । विधिमान्यता के लिये यह आवश्यक है कि अभिव्यक्त रूप से यह घोषणा की जाए और राजनयिक सम्बन्ध स्थापित करने की इच्छा प्रकट की जाए।

<u>Question 4.</u> मान्यता को कैसे पहचानेगें? तथा प्रत्यर्पण का क्या उददेश्य है?

<u>Answer :</u> मान्यता' शब्द की परिभाषा तथा अर्थ– मान्यता अन्तर्राष्ट्रीय विधि का एक महत्वपूर्ण विषय है। मान्यता ही प्रकिया है जिसके द्वारा नये राज्य को अन्तर्राष्ट्रीय समुदाय का सदस्य के रूप में स्वीकार किया जाता है। आधुनिक युग में मान्यता का महत्व और भी अधिक बढ़ गया है।

<u>स्वार्जनबर्जर के अनुसार</u>– मान्यता को अन्तर्राष्ट्रीय विधि को विकसित करती हुई उस प्रकिया द्वारा अधिक अच्छी तरह से समझाा जा सकता है, जिसके द्वारा राज्यों ने एक दूसरे की नकारात्मक सार्वभौमिकता स्वीकार कर ली है।

<u>प्रो0 ओपेनहाइम के अनुसार–</u> ' किसी नये राज्य को अन्तर्राष्ट्रीय समुदाय के सदस्य के रूप में मान्यता प्रदान करने वाले राज्य यह घोषित करते है कि उनके मत नये राज्य ने अन्तर्राष्ट्रीय विधि में निर्दिष्ट राष्ट्रत्व के तत्व प्राप्त कर लिये है।'

मान्यता के प्रकार (Modes of Recognition)-

मुख्यतः मान्यता दो प्रकार की हो सकती है–

1. **तथ्येन मान्यता** (de facto recognition) **तथा**
2. **विधि मान्यता** (de juer recognition)

मान्यता के विधिक परिणाम
(Lagal effects of recognition)

मान्यता के मुख्यतः निम्नलिखित परिणाम होतें है–

1. मान्यता प्राप्त करने वाले राज्य को मान्यता दिये जाने वाले राज्य के न्यायालयों में दावा करने का अधिकार प्राप्त हो जाता है।
2. उपर्युक्त न्यायालयों में मान्यता प्राप्त करने वाले राज्य के भूत तथा वर्तमान विधायनी तथा कार्यपालिका के कार्यों को लागू करवाया जा सकता है।
3. मान्यता प्राप्त करके राज्य को मान्यता प्रदान करने वाले राज्य में स्थित सम्पति के सम्बन्ध में उत्तराधिकार प्राप्त हो जाता है।
4. मान्यता प्राप्त करने वाले राज्य को राजनयिक प्रतिनिधियों के मामले में उन्मुक्ति प्राप्त करने का अधिकार प्राप्त हो जाता है।
5. नया राज्य जिसे मान्यता प्रदान की गई है मान्यता प्रदान करने वाले राज्यों से राजनयिक सम्बन्ध रखने तथा उनसे सन्धि करनें की क्षमता प्राप्त कर लेता है।

प्रत्यर्पण का उददेश्य (Purpose of Extradition)-

प्रत्यर्पण का मुख्य उददेश्य अपराध को रोकना एवं अपराधी को दण्डित करना है। यदि कोई व्यक्ति एक देश में अपराध करके दण्ड से बचने के लिये दूसरे देश में भाग जाता है तो ऐसे व्यक्ति को प्रत्यर्पण की प्रकिया से वापस लाकर उसको न्यायालय द्वारा मुकदमा चलाकर दण्डित किया जाता है। जिस देश में अपराधी भाग कर चला जाता है तथा यदि आपराधिक विधि में कोई तकनीकी या अधिकारिता की कमी के कारण दण्डित नहीं किया जा सकता है तो भी उस देश में जहॉ उसने अपराध किया है वापस लाकर दण्डित किया जा सकता है।

अन्तर्राष्ट्रीय क्षेत्र में आपराधिकता को रोकने एवं कम करने उददेश्य से भी प्रत्यर्पण की प्रक्रिया अपनायी जाती है। इस प्रकार अपराध को रोकने में प्रत्यर्पण निवारक का कार्य करता हैं।

Question 5. दोहरे अपराधीकरण का नियम क्या है?

Answer : - दोहरी अपराधिकता का सिद्धान्त निर्दिष्ट करता है कि प्रत्यर्पण के लिए किसी अपराध को दोनों ही राज्यों में (राज्यक्षेतीय तथा निवेदन राज्य में),मान्य होना चाहिए। यदि यह शर्त पूरी नहीं होती है तो किसी व्यक्ति का प्रत्यर्पण नहीं हो सकता। यह सिद्धान्त इस विचाारण पर आधारित होना प्रतीत होता है कि यह राज्यक्षेत्रीय राज्य के अन्तःकरण पर आघात पहुॅचाएगा, यदि उसे किसी ऐसे व्यक्ति का प्रत्यर्पण करना हो, जब उसकी अपनी विधि उसे अपराधी नहीं मानती हों। इसके अतिरिक्त निवेदक राज्य उन अपराधों के लिए समपर्ण की मॉग ही नहीं करेगा, जिनको उसके राज्य में मान्यता नहीं दी गयी है। इस प्रकार, यह सिद्धान्त दोहरे उददेश्य को पूरा करता है। इस सिद्धान्त निवेदक राज्य को अपनी विधि को लागू करने में सहायता करता है और राज्य क्षेत्रीय राज्य को भगोड़े अपराधियों से उसकी रक्षा करता है। इसको सुनिश्चित करने के लिए कि अपराध दोनों राज्यों में मान्य है, प्रत्यर्पण योग्य अपराधों की सूची कुछ राज्यों की प्रत्यर्पण विधियों में संलग्न की जाती है। किन्तु , सामान्यतया, प्रत्यर्पण सन्धियों में अपराधों की सूची सन्निहित होती है।

Question 6:- आश्रय को परिभाषित करें? आश्रय क्या है?

Answer : - **आश्रय–** आश्रय का तात्पर्य है एक राज्य द्वारा अपने राज्य क्षेत्र या परिसर में जो उसके नियंत्रण में है संरक्षण या शरण प्रदान करना, उस व्यक्ति को जो ऐसे संरक्षण या शरण की मांग करता है। स्पष्टतः आश्रय प्रत्यर्पण से जुड़ा हुआ है जैसे जहॉ आश्रय समाप्त होता है प्रत्यर्पण या अभ्यर्पण प्रारम्भ होता है। यहॉ यह ध्यान रहे दोनों जुड़े तो हुये है किन्तु परस्पर निर्भर नहीं अपितु स्वतन्त्र है। यदि भगोड़े को शरण देने वाले राज्य द्वारा उस समय को जिसमें उसने अपराध कारित किया है को अभ्यर्पित नहीं किया जाता तो उसे राज्य में रहने दिया जाता है और उसे आश्रय प्रदान किया जायेगा। किन्तु एक बार क्षेत्रीय राज्य जिसमें भगोड़े ने शरण ली है जब भगोड़े को प्रत्यर्पित करने का निश्चय करता है तो आश्रय का प्रश्न ही नहीं उठता। आश्रय का उददेश्य एक व्यक्ति को संरक्षण प्रदान करना है और इस तरह उसे आश्रयदाता राज्य के क्षेत्राधिकार के अन्तर्गत ले आना है।

परिभाषा (Definition) - आश्रय से तात्पर्य है प्रधानतया एक स्थान जिसमें पीछा से सुरक्षा है और जिसे परिभाषित किया जाता है, शरण और सुरक्षा के स्थान या पुण्यस्थान के रूप में जहॉ अपराधियों या ऋणी को शरण प्राप्त होता है और जहॉ से उन्हें अपवित्रता के बिना नहीं निकाला जा सकता। इसे दुर्भाग्यशालियों के संरक्षण और अनुतोष (relif) की एक संस्था के रूप में भी माना जाता है। आश्रय, अपने भूल अनुमान एवं वृहत् अर्थो में केवल शरण का संकेतक है– सुरक्षा एवं शान्ति का एकान्त स्थान। एक अपराधी की। सामान्य भाषा में वह स्थान जहॉ उसका विचारण (trial) नहीं होगा।

स्टार्क के अनुसार अन्तर्राष्ट्रीय विधि में आश्रय की संकल्पना में दो तत्व अन्तर्ग्रस्त है–

1. शरण जो मात्र अस्थायी पनाह से कुछ ज्यादा है, और
2. सक्रिय संरक्षण उन प्राधिकारियों के द्वारा जो आश्रय के क्षेत्र के नियन्त्रण में है।

आश्रय के प्रकार (kinds of asylum)-

आश्रय दो प्रकार का होता है–

1. प्रादेशिक (राज्य क्षेत्रीय) आश्रय और

2.वाह्य प्रादेशिक (वाह्य राज्य क्षेत्रीय) आश्रय।

<u>Question 7:-</u> आश्रय का प्रकार क्या है?

Answer:- आश्रय के प्रकार (kinds of asylum)-

आश्रय दो प्रकार का होता है–

1. प्रादेशिक (राज्य क्षेत्रीय) आश्रय और

2.वाह्य प्रादेशिक (वाह्य राज्य क्षेत्रीय) आश्रय।

प्रादेशिक आश्रय (Territorial asylum)- राज्य क्षेत्रीय या प्रादेशिक आश्रय राज्य द्वारा अपने क्षेत्र में प्रदान किया जाता है। राज्य क्षेत्रीय आश्रय प्रदान करने वाले राज्य क्षेत्रीय सम्प्रभुता का एक लक्षण हैं। ऐसा आश्रय प्रदान किये जाने की जड़े प्राचीन है। यह न केवल राजनैतिक, सामाजिक एवं धार्मिक शरणाथियो को

अपितु उन सभी को जो विदेश से हैं और जिसमें आपराधिक अपराधी भी आते है, दी जाती है। सामान्यता वे लोग जो क्षेत्रीय राज्य के राष्ट्रिक नहीं है, और जिन्हें विदेशी पोतों पर जो राज्य क्षेत्रीय समुद्र में है, अभिरक्षा में रखा गया है, आश्रय प्रदान नहीं किया जायेगा। यह विवाद का विषय है कि क्या राज्य युद्धबन्दी (prisioner of war) को जिसे उसने बन्दी बनाया है और जो घर वापसी का अनिच्छुक है उसे आश्रय दे सकता है।

स्टार्क के अनुसार राज्य क्षेत्रीय आश्रय को हाल की घटनायें है उन्हें देखते हुये निम्न भागों में बांटा जाना चाहिये (1) राजनीतिक आश्रय उदाहरण के लिये तथाकथित दल बदलने वालों को (2) शरणार्थी आश्रय' उन शरणार्थियों को जिन्हें दृढ आशंक या (well founded) भय है कि उन्हें गृह राज्य में उत्पीड़ित किया जायेगा। (3) 'सामान्य आश्रय' उन लोगों के लिये जो अपने देश से पलायन कर गये है आर्थिक बेहतरी पाने के लिये, किन्तु जिन्हें अप्रवासी का दर्जा नहीं प्राप्त है।

वाह्य प्रादेशिक (वाह्य राज्य क्षेत्रीय) आश्रय (Extra Territorial asylum)- वाह्य प्रादेशिक आश्रय उस आश्रय को कहते हैं जो राज्य अपने क्षेत्र के बाहर प्रदान करता है। आधुनिक अन्तर्राष्ट्रीय विधि राज्यों से वाह्य प्रादेशिक आश्रय प्रदान करने के अधिकार को मान्यता नहीं देता है। बाह्य प्रादेशिक आश्रय केवल अपवाद के रूप में या विशेष परिस्थितियों में ही किया जा सकता हैं।

<u>Question 8:-</u> राज्य उत्तराधिकार को परिभाषित करें। राज्य उत्तराधिकार के प्रकार क्या है?

Answer:- राज्य उत्तराधिकार का अर्थ तथा परिभाषा– फेन्विक के अनुसार अन्तर्राष्ट्रीय विधि में राज्यों के उत्तराधिकार के नियम को ग्रोशस ने प्रारम्भ किया । उत्तराधिकार के विषय में विधि के नियम को ग्रोशस ने रोमन विधि में उसके उत्तरदायित्व था अधिकार उसके उत्तराधिकारियों को प्राप्त हो जाते है। यह नियम ग्रोशस ने राज्यों के उत्तराधिकार के विषय में भी अननाया। बाद में कुछ अन्तर्राष्ट्रीय सन्धियॉ हुई जिसके द्वारा उत्तराधिकार सम्बन्धी विधि के नियमों का विकास हुआ।

प्रो0 ओपेनहाइम के अनुसार– अन्तर्राष्ट्रीय व्यक्तियों का उत्तराधिकार तब होता है। जब एक या एक से अधिक अन्तर्राष्ट्रीय व्यक्ति (राज्य) एक अन्य अन्तर्राष्ट्रीय व्यक्ति का स्थान कुछ परिवर्तनों के फलस्वरूप ग्रहण कर लेते है। राज्यों के अभ्यास से यह संकेत मिलता है कि अन्तर्राष्ट्रीय विधि के अनुसार सामान्य रूप से

राज्यों का उत्तराधिकार नहीं होता है, और एक अन्तर्राष्ट्रीय व्यक्ति या राज्य के लुप्त हो जाने से उसके अधिकार तथा कर्तव्य भी सामान्यतया लुप्त हो जाते है।

राज्य उत्तराधिकार के प्रकार (kinds of state Succession)

राज्य उत्तराधिकार निम्नलिखित प्रकार के हो सकते है–

1. सार्वभौमिक उत्तराधिकार तथा
2. आंशिक उत्तराधिकार

सार्वभौमिक उत्तराधिकार – सार्वभौमिक उत्तराधिकार निम्नलिखित परिस्थितियों में होता है–

(क) जब एक राज्य दूसरे राज्य को पूर्ण रूप से ले ले या अपने में मिला ले, चाहे स्वेच्छा से अथवा विजय द्वारा,

(ख) जब किसी राज्य के दो या अधिक भाग हो जाए और उनमें से प्रत्येक भाग अलग–अलग अन्तराष्ट्रीय व्यक्ति या राज्य बन जाएं या पड़ोसी राज्यों द्वारा जीत लिये जायं।

आंशिक उत्तराधिकार – आंशिक उत्तराधिकार निम्नलिखित परिस्थितियों में होता है–

(क) जब किसी राज्य का कोई हिस्सा विद्रोह करने अथवा करार या समझौते द्वारा उसमें अलग हो जाता है तथा स्वतन्त्रता प्राप्त करके एक अलग अन्तर्राष्ट्रीय व्यक्ति या राज्य बन जाता है। बंगलादेश का पाकिस्तान के विरूद्ध विरोध करके स्वतन्त्रता प्राप्त करना तथा उसके पश्चात् अलग राज्य बनाना आंशिक उत्तराधिकार का एक अच्छा उदाहरण है।

(ख) जब किसी राज्य को दूसरे का कुछ हिस्सा हस्तान्तरण कर दिया जाता है या मिल जाता है।

(ग) जब कोई सार्वभौमिक राज्य किसी संघात्मक राज्य में मिलकर अपनी स्वतन्त्रता का कुछ भाग खो देता है या किसी दूसरे राज्य के संरक्षण में आ जाता है।

Question 9:- राज्य की उत्तदायित्व को परिभाषित करें? उत्तरदायित्व के प्रकार क्या है? उत्तरदायित्व की अवधारणा क्या है?

Answer:- राज्य उत्तराधिकार का अर्थ तथा परिभाषा– फेन्विक के अनुसार अन्तर्राष्ट्रीय विधि में राज्यों के उत्तराधिकार के नियम को ग्रोशस ने प्रारम्भ किया । उत्तराधिकार के विषय में विधि के नियम को ग्रोशस ने रोमन विधि में उसके

उत्तरदायित्व था अधिकार उसके उत्तराधिकारियों को प्राप्त हो जाते है। यह नियम ग्रोशस ने राज्यों के उत्तराधिकार के विषय में भी अननाया। बाद में कुछ अन्तर्राष्ट्रीय सन्धियॉ हुई जिसके द्वारा उत्तराधिकार सम्बन्धी विधि के नियमों का विकास हुआ।

प्रो0 ओपेनहाइम के अनुसार– अन्तर्राष्ट्रीय व्यक्तियों का उत्तराधिकार तब होता है। जब एक या एक से अधिक अन्तर्राष्ट्रीय व्यक्ति (राज्य) एक अन्य अन्तर्राष्ट्रीय व्यक्ति का स्थान कुछ परिवर्तनों के फलस्वरूप ग्रहण कर लेते है। राज्यों के अभ्यास से यह संकेत मिलता है कि अन्तर्राष्ट्रीय विधि के अनुसार सामान्य रूप से राज्यों का उत्तराधिकार नहीं होता है, और एक अन्तर्राष्ट्रीय व्यक्ति या राज्य के लुप्त हो जाने से उसके अधिकार तथा कर्तव्य भी सामान्यतया लुप्त हो जाते है।

राज्य उत्तराधिकार के प्रकार (kinds of state Succession)

राज्य उत्तराधिकार निम्नलिखित प्रकार के हो सकते है–

1. सार्वभौमिक उत्तराधिकार तथा
2. आंशिक उत्तराधिकार

सार्वभौमिक उत्तराधिकार – सार्वभौमिक उत्तराधिकार निम्नलिखित परिस्थितियों में होता है–

(क) जब एक राज्य दूसरे राज्य को पूर्ण रूप से ले ले या अपने में मिला ले, चाहे स्वेच्छा से अथवा विजय द्वारा,

(ख) जब किसी राज्य के दो या अधिक भाग हो जाए और उनमें से प्रत्येक भाग अलग–अलग अन्तराष्ट्रीय व्यक्ति या राज्य बन जाएं या पड़ोसी राज्यों द्वारा जीत लिये जायं।

आंशिक उत्तराधिकार – आंशिक उत्तराधिकार निम्नलिखित परिस्थितियों में होता है–

(क) जब किसी राज्य का कोई हिस्सा विद्रोह करने अथवा करार या समझौते द्वारा उसमें अलग हो जाता है तथा स्वतन्त्रता प्राप्त करके एक अलग अन्तर्राष्ट्रीय व्यक्ति या राज्य बन जाता है। बंगलादेश का पाकिस्तान के विरूद्ध विरोध करके स्वतन्त्रता प्राप्त करना तथा उसके पश्चात् अलग राज्य बनाना आंशिक उत्तराधिकार का एक अच्छा उदाहरण है।

(ख) जब किसी राज्य को दूसरे का कुछ हिस्सा हस्तान्तरण कर दिया जाता है या मिल जाता है।

(ग) जब कोई सार्वभौमिक राज्य किसी संघात्मक राज्य में मिलकर अपनी स्वतन्त्रता का कुछ भाग खो देता है या किसी दूसरे राज्य के संरक्षण में आ जाता है।

अन्तर्राष्ट्रीय विधि में जब एक राज्य दूसरे राज्य का स्थान लेता है तो सामान्यतः अधिकार तथा कर्तव्य भी लुप्त हो जाते हैं तथा कुछ क्षेत्रों में अपवाद के रूप में उत्तराधिकार होता है। राज्य उत्तराधिकार शव्दों से यह बोध होता है कि जो राज्य किसी राज्य का स्थान ग्रहण करता है, उसे उस राज्य के सभी आधिकार तथा उत्तरदायित्व प्राप्त हो जाते है। परन्तु वास्तविकता यह है कि कुछ सीमित क्षेत्रों मे ही उत्तराधिकार होता है। इसके अतिरिक्त इस बात में बड़ा मतभेद है कि राज्यों के उत्तराधिकार होने पर किस सीमा तक पूर्ववर्ती राज्य के अधिकार तथा कर्तव्यों को उत्तराधिकार होगा।

Question 10:- युद्ध के कानूनी प्रभाव क्या हैं?

Answer:- युद्ध की परिभाषा– जब राज्य अपने विवादों को बाध्यकारी साधनों द्वारा भी निपटाने में असफल हो जातें है, तब वह युद्ध का आश्रय लेते है। युद्ध अन्तर्राष्ट्रीय विवादों को निपटाने का अन्तिम साधन है। युद्ध का आश्रय लेकर राज्य एक दूसरे पर इच्छा थोपनें की इच्छा रखतें हैं।

ओपेनहाइम के अनुसार–'युद्ध दो या अधिक राज्यों के बीच, उनके सशस्त्र बलों द्वारा संघर्ष है जिसका उददे्श्य एक दूसरे को पराजित करने तथा शांति की ऐसी शर्तों को थोपना है जिसकी विजयी राज्य इच्छा करें।

डॉ0 नगेन्द्र सिंह के अनुसार– युद्ध का उददेश्य शत्रु– राज्य का पूर्ण विनाश नहीं है वरन उसे सशस्त्र शाक्ति से परास्त करना तथा अपनी शर्तों को मनवाना है।

युद्ध का प्रभाव (परिणाम)– युद्ध, विवादी यद्धरत देशों के बीच तथा उसके नागरिकों क बीच शांतिपूर्ण सम्बन्धों को प्रभावित करता है। युद्ध के प्रभाव निम्न प्रकार हैं–

1. राजनयिक सम्बन्ध
2. कोसलीय सम्बन्ध
3. सन्धि
4. शत्रु सम्पत्ति

(i) सार्वजनिक सम्पत्ति

(ii) निजी संम्पत्ति

1. संविदा (Contracts)

   (i) निष्पाद्य संविदा

   (ii) निष्पादित संविदा

6.शत्रु के राज्य क्षेत्र पर युद्धरत देश के नागरिक

<u>Question 11:-</u> युद्ध के राष्ट्र क्या हैं?

Answer:- युद्ध की परिभाषा– जब राज्य अपने विवादों को बाध्यकारी साधनों द्वारा भी निपटाने में असफल हो जातें है, तब वह युद्ध का आश्रय लेते है। युद्ध अन्तर्राष्ट्रीय विवादों को निपटाने का अन्तिम साधन है। युद्ध का आश्रय लेकर राज्य एक दूसरे पर इच्छा थोपनें की इच्छा रखतें हैं।

डॉ0 नगेन्द्र सिंह के अनुसार– युद्ध का उददेश्य शत्रु– राज्य का पूर्ण विनाश नहीं है वरन उसे सशस्त्र शाक्ति से परास्त करना तथा अपनी शर्तों को मनवाना है।

बहुत प्राचीन समय से युद्ध के प्रारम्भ के विषय में किसी न किसी प्रकार की घोषण या सूचना दी जाती रहीं है। 16वी शताब्दी तक यह प्रथा थी कि युद्ध के प्रारम्भ की सूचना या तो पत्र द्वारा किसी विशेष दूत द्वारा दी जाती थी, परन्तु 17वीं शताब्दी के बाद यह प्रथा समाप्त हो गई। 17वीं शताब्दी में ग्रोशस नाम के विधिशास्त्री ने यह मत प्रकट किया कि युद्ध की घोषण आवश्यक है। परन्तु उसके बाद भी अनेक ऐसे युद्ध हुए जिसमें युद्ध संघर्ष बिना औपचारिक घोषण आवश्यक है।

<u>Question 12:-</u> सुरक्षा परिषद की कार्यप्रणाली और शक्ति को परिभाषित करें।

Answer:- सुरक्षा परिषद से सम्बन्धित प्रावधान संयुक्त राष्ट्र के चार्टर के अनु0 23 से 32 तक में वर्णित है, जो अध्याय 5 में सम्मिलित किये गये है।

सुरक्षा परिषद का गठन– सुरक्षा परिषद् संयुक्त राष्ट्र का प्रमुख अंग है। मूलतः इसमें 11 सदस्य होते थे किन्तु 1965 में चार्टर में संशोधन करके इनके सदस्यों की संख्या 15 कर दी गई। इसके सदस्य दो प्रकार के होते है–

1. स्थाई सदस्य 2. अस्थाई सदस्य।

1. **स्थाई सदस्य(अनु0 23(1))-** सुरक्षा परिषद के 15 सदस्यों में से 5 स्थाई सदस्य होते है जिनके नाम चार्टर के अनु0 23 के परिच्छेद (1) में उल्लिखित है। ये नाम है–

(i) चीन (ii) फ्रांस (iii) रूसी संघ (iv) ग्रेट ब्रिटेन (v) संयुक्त राज्य अमेरिका।

अस्थाई सदस्य(अनु0 23(2))- सुरक्षा परिषद के अन्य 10 सदस्यों को अस्थाई सदस्य कहा जाता है। ये दो वर्ष की अवधि के लिए महासभा द्वारा निर्वाचित किये जाते है, किन्तु प्रत्येक वर्ष पॉच सदस्यों दो वर्ष का कार्यकाल पूरा करने के बाद पदमुक्त हो जाते है। यह पद्धति इसलिए अपनाई गई है, जिससे एक ही समय में सभी अस्थाई सदस्य नये न हो जाये।

सुरक्षा परिषद के कुछ महत्वपूर्ण कार्य निम्नलिखित है–

1. अन्तर्राष्ट्रीय शान्ति और सुरक्षा को बनाये रखना।
2. निर्वाचन सम्बन्धी कार्य
3. पर्यवेक्षक कार्य
4. संवैधानिक कार्य

सुरक्षा परिषद की शक्तियॉ –

1. सर्वप्रथम चार्टर के अनु0 39 के अन्तर्गत सुरक्षा परिषद् यह निश्चित करती है कि शांति– भंग अथवा अतिक्रमण हुआ है और यदि इस विनिश्चय पर पहुॅचती है तो अन्तर्राष्ट्रीय शांति और सुरक्षा बनाये रखने तथा पुनर्स्थापित करने हेतु अनु041 तथा42 के अनुसार कार्यवाही करने का विनिश्चय करती है।
2. अनु0 41 के अन्तर्गत अनुसार किये गये उपायों से समस्या का समाधान नहीं होता है तो सुरक्षा परिषद अन्तर्राष्ट्रीय शान्ति तथा सुरक्षा को बनाये रखने या स्थापित करने के लिए अनु042 के अन्तर्गत हवाई, सामुद्रिक या स्थल सेवाओं का प्रयोग कर सकती है। इस प्रकार की कार्यवाही में प्रदर्शन , नाकाबन्दी तथा संयुक्त राष्ट्र के सदस्यों द्वारा नभ, समुद्र तथा स्थल सेनाओं का प्रयोग सम्मिलित है।
3. अनु041 के अन्तर्गत अन्तर्राष्ट्रीय शांति और सुरक्षा को बनाये रखने के लिए सुरक्षा परिषद राज्यों को यह सुझाव दे सकती है कि वह दोषी राज्य से आर्थिक तथा अन्य प्रकार के सम्बन्धों का विच्छेद कर दें।

<u>Question 13:-</u> अन्तर्राष्ट्रीय न्यायालय के कार्य और शक्ति को परिभाषित करें।

Answer:- अन्तर्राष्ट्रीय न्यायालय की स्थापना हेग नीदरलैण्ड्स में 3 अपैल 1946 को की गई थी। संयुक्त राष्ट्र घोषण –पत्र के अनु092 से अनु 96 तक में अन्तर्राष्ट्रीय न्यायालय से सम्बन्धी प्रावधान है। अन्तर्राष्ट्रीय

न्यायालय का एक पृथक संविधान है जिसे अन्तर्राष्ट्रीय न्यायालय की संविधि कहा गया है।

न्यायालय की अधिकारिता – न्यायालय की अधिकारिता को दो भागों में अर्थात विवादास्पद अधिकारिता तथा सलाहकारी अधिकारिता विभाजित किया जा सकता है

विवादास्पद अधिकारिता – जब न्यायालय विवादी पक्षकारों की सम्मति के आधार पर वाद का निर्णय करता है, तब न्यायालय की अधिकारिता को विवादास्पद अधिकारिता कहा जाता है। सम्मति अन्तर्राष्ट्रीय अधिकारिता का आधार है इसलिए किसी राज्य को उसकी इच्छा के विरूद्ध न्यायालय की अधिकारिता को स्वीकार करने के लिए विवश नहीं किया जा सकता ।

सलाहकारी परामर्शीय अधिकारिता– अन्तर्राष्ट्रीय न्यायालय द्वारा परामर्श देनें का कार्य भी स्टेट्यूट के अनु0 65 के अन्तर्गत सम्पन्न किया जाता है। U.N.Charter के अनु0 96 के अन्तर्गत महासभा अथवा सुरक्षा परिषद् किसी भी विधिक प्रश्न पर अन्तर्राष्ट्रीय न्यायालय का परामर्श मॉग सकती है। संयुक्त राष्ट्र संघ के दूसरे अंग तथा विशेष अभिकरण भी उनके अधिकार क्षेत्र में उठने वाले विधिक प्रश्नों पर न्यायालय का परामर्श प्राप्त कर सकता हैं, न्यायालय का परामर्श प्राप्त होता है, जिसे मानने के लिए किसी भी संस्था को बाध्य नहीं किया जा सकता।